पंच पर्व का प्रथम दिवस है धनत्रयोदशी

धनत्रयोदशी 13 नवम्बर 2020

प्रकाश और उल्लास का महापर्व दीपावली आने वाली है। दीपावली का त्यौंहार हमारे जीवन में नयी खुशियां लेकर आता है। इस पर्व पर चहुंओर प्रकाश ही प्रकाश दिखाई देता है, उल्लास एवं प्रसन्नता ही प्रसन्नता दिखाई देती है। जहां नजर पड़े वहाँ रंग-बिरंगी लाईटे और दीपक ही दीपक दिखाई देते हैं। दीपावली का पर्व धन-प्राप्ति अनुष्ठान के लिये सर्वोत्तम माना जाता है लेकिन दीपावली का महान् पर्व अकेले ही नहीं आता है इसके साथ ही आते हैं पांच महान् पर्व, जिन्हें हम पंचपर्व के रूप में मनाते हैं। इन पंच पर्वों का हमारे हिन्दु धर्म में अत्यधिक महत्व है। इनमें सर्वप्रथम आती है 'धनतेरस' इसे धन त्रयोदशी के नाम से भी जाना जाता है। इस दिन भगवान धन्वन्तरी का उद्भव हुआ था। इस दिन सोना-चांदी आदि खरीदना शुभ माना जाता है। यही कारण है कि धनतेरस के दिन बाजार लोगों की भीड़ से भरे हुए होते हैं। इस दिन का धार्मिक और आध्यात्मिक महत्व क्या है आईये जाने।

धन-त्रयोदशी का महत्व-

कार्तिक कृष्ण त्रयोदशी को 'धनतेरस' कहते हैं। इस दिन लोग सतैल स्नान करते हैं। व्यापारी लोग अपना हिसाब- किताब समाप्त करते हैं और बही-खाता तथा रोकड़ एकत्र कर उनकी पूजा करते हैं। दीप-माला इसी दिन से जलायी जाती है और 5 दिन तक बराबर जलायी जाती है।

धन्वन्तरि द्वारा निर्मित आयुर्वेद शास्त्र से न केवल भारत ही अपितु समग्र विश्व लाभान्वित हुआ है। इसलिए स्वास्थ्य रक्षा और सवंर्द्धन की दृष्टि से धन्वन्तरि जयंती विशेष महत्व रखती है। इस संसार में जीवनदान को सब दानों में महत्वशाली बताया गया है। 'नहि जीवन दानाद्धि दामन्यं विशिष्ये।' इसलिए सर्वप्रथम जीवन दाता आयुष्य तन्त्र प्रवर्तक स्वास्थ्य प्रतीक भगवान धन्वन्तरि की जयंती मनाना वैद्य वर्ग का धर्म है। यह पवित्र दिन प्रतिवर्ष आरोग्यता का महान् संदेश लेकर आता है। इसलिए धन्वन्तरि पूजन का पर्व मनाया जाता है। इस मांगलिक शुभकार्य पर किए जाने वाले कार्यों का स्वास्थ्य की दृष्टि से बड़ा महत्व है। आयुर्वेद ने स्वस्थ शरीर को ही धन माना है।' पहला सुख निरोगी काया, दूजा सुख घर में माया।' लक्ष्मी पूजा को दूसरा दर्जा दिया गया है। आयुर्वेद में धन्वन्तरि जयंती का अर्थ 'विद्या का पूजन' और विद्या का पूजन का अर्थ प्रकृति, औषधि वनस्पति और इन सबसे बढ़ चढ़कर प्रकृति की गोद में उपजे प्राकृतिक निधियों को पूजना है। आयुर्वेद के अनुसार धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष की प्राप्ति स्वास्थ्य दिवस के रूप में मनाकर सब तन्दुरूस्ती के महत्व को समझें। दवाओं पर आश्रित रहने की अपेक्षा स्वाभाविक रूप से पूर्ण स्वस्थ रहने के प्रति सुचारू संपन्न जागरूक और सचेष्ट हों। जीवन में पूर्ण स्वस्थ रहना ही सबसे बड़ी सफलता है।

अभी तक धन्वन्तरि त्रयोदशी का प्रचार मुख्यतया वैद्यसमुदाय में ही है, किन्तु आज जब कि रोग को समूल नाश करने वाले आयुर्वेद के उपचार की उपेक्षा कर लोग स्वल्पकालिक लाभप्रद किन्तु परिणाम-दुःखद पाश्चात्य-चिकित्सा की तरह बुरी तरह आकर्षित होते जा रहे हैं तब आवश्यकता इस बात की है कि भगवान् धन्वन्तरि की यह जयन्ती आम जनता में खूब धूमधाम से मनाई जाए और जनता को देशी औषधियों के प्रति प्रेम उत्पन्न करने की प्रेरणा दी जाए।

इस दिन प्रदोष काल में यम के लिए दीपदान एवं नैवेद्य समर्पित करने से अकाल मृत्यु से रक्षा होती है। शास्त्रों का ऐसा वचन सर्वांश में सत्य ही है। मानव-जीवन को अकाल मृत्यु से बचाने के लिये दो ही वस्तु तो आवश्यक हैं। प्रकाश-ज्ञान और नैवेद्य-समुचित खुराक। यदि यह दोनों ही वस्तु आप खुले हाथों दान दें तो न केवल आपकी किन्तु सभी देशवासियों की अकाल मृत्यु से रक्षा होगी।

धन्वन्तरी आरोग्य साधना

जीवन में हम कई कारणों से व्यथित रहते हैं, और धीरे-धीरे यह व्यथा रोग का रूप ले लेती है। यह व्यथा सामाजिक हो या किसी अन्य प्रकार की, हमारे दैनिक जीवन में इसका प्रभाव हमारे शरीर पर भी पड़ता है। आज के प्रदूषित

वातावरण में पूर्ण स्वस्थ रहना तो एक आश्चर्यजनक घटना हो चुकी है, प्रदूषण के कारण विभिन्न प्रकार के रोग उत्पन्न होने लग गये हैं, न केवल शारीरिक, मानसिक भी।

इनमें से विभिन्न प्रकार के रोगों का कोई स्थायी इलाज नहीं है, वरन् ये रोग दवाओं के माध्यम से दबा दिये जाते हैं या फिर रोग उत्पन्न करने वाले कीटाणुओं को दवाओं के माध्यम से निष्क्रिय कर देते हैं, लेकिन पुनः कुछ समय बाद दूषित वातावरण पाकर वह रोग पुनः उभर आता है या फिर दवाओं के नियमित प्रयोग से अनेक व्याधियां उत्पन्न हो जाती है, जिससे एक प्रकार के रोगों की श्रृंखला निर्मित हो जाती है, एक रोग समाप्त होता है, कि दूसरे रोग के लक्षण दिखने लग जाते हैं। वर्तमान चिकित्सा कुछ इस प्रकार की ही है।

लेकिन हम पूर्वकाल की ओर लौटें, तो हम पायेंगे कि उस समय लोग वर्तमान समय से ज्यादा स्वस्थ थे, वे न केवल स्वस्थ थे अपितु प्रत्येक व्यक्ति अपनी पूर्ण आयु पूरे हिम्मत, जोश और उमंग के साथ जीता था, लेकिन वर्तमान युग में 40 या 45 वर्ष पूरा करते ही व्यक्ति में धीरे-धीरे जीने की आशा क्षीण हो जाती है। 55 या 60 वर्ष की आयु तक तो वह स्वयं वृद्ध तथा जर्जर अवस्था में पहुंच जाता है, उसके अंदर का जोश, उमंग, उल्लास समाप्त हो जाता है, वह सिर्फ देह की समाप्ति की प्रतीक्षा करने लगता है। मानसिक रूप से भी वह स्वयं को अशक्त तथा असहाय अनुभव करने लगता है।

आज मानव इस प्रकार का जीवन जी रहा है, कि उसे ज्ञात ही नहीं होता है, कब उस पर यौवनकाल आता है, कब उसकी शैषावस्था समाप्त हो जाती है, कब वह प्रौढ़ बन जाता है। यदि सर्वेक्षण किया जाए तो मानव के अंदर का उल्लास, जोश मात्र 25 या 30 वर्ष की अवस्था तक ही रहता है।

लेकिन हम यदि अपने पूर्वजों को देखें तो वे 100 वर्ष की आयु पूर्ण करके भी थके नहीं, जीवन से निरूत्साहित नहीं हुए।

आखिर क्या कारण है, कि हमारे पूर्वज दीर्घायु होते थे, उनकी कार्य क्षमता आज के व्यक्ति से कहीं अधिक थी, क्योंकि उनके पास ऐसी चिकित्सा पद्धति थी, जिसका वे प्रयोग कर अपनी बीमारियां ठीक कर लेते थे। ऐसा तो नहीं है, कि वे रोग ग्रस्त नहीं होते थे, रोग तो पहले भी थे।

भगवान कृष्ण के दो पुत्रों को कुष्ठ रोग हुआ था, जिसे उन्होंने मंत्रों के माध्यम से समाप्त किया।

आज भी आदिवासी क्षेत्रों में जहां आधुनिक सुविधायें नहीं पहुंच सकती है, वहां पर रोगों का इलाज मंत्रों के माध्यम से तथा उनके अपने प्रयोगों के माध्यम से होता है तथा वे प्रयोग पूर्ण रूप से प्रभावी होते हैं।

लेकिन चिकित्सा विज्ञान इसको स्वीकार कर पाने में असमर्थ है। वह मंत्र शक्ति के उपयोग को भली प्रकार से नहीं जान पाया है। मंत्र तथा साधना बल से जर्जर देह ने भी अपने आपको पूर्ण रूप से युवा बना लिया है।

अभी भी कुछ ऐसी साधनाएं हैं, जिनको संपन्न कर आज भी संन्यासी जन शून्य कन्दराओं में रहने के बाद भी स्वस्थ रहते हैं। उनके पास ऐसी ही साधनाओं में एक अद्वितीय रोग मुक्ति हेतु साधना है 'धन्वन्तरि प्रयोग'।

जिसे संपन्न कर व्यक्ति कई प्रकार के रोगों से दूर हो सकता है। यह प्रयोग हमारे ऋषियों की ओर से हमें वरदान स्वरूप प्राप्त हुआ है। यह प्रयोग एक अत्यंत उच्चकोटि के योगी के द्वारा प्राप्त हुआ है। उन्होंने बताया, कि यह प्रयोग अत्यंत विलक्षण प्रयोग है। धन्वन्तरी अपने काल के सर्वश्रेष्ठ चिकित्सक व आयुर्वेदज्ञ रहे। धन्वन्तरी ने अपने काल में भयानक से भयानक रोगों को समाप्त किया है। उन्होंने यह भी बताया है कि अनेक ऋषियों, संन्यासियों ने इस साधना को संपन्न कर अपने आपको निरोगी रखा। इस साधना को संपन्न करने वाला व्यक्ति सदैव ही प्रसन्न और जोशीला तथा उत्साहित रहता है, उसकी कार्य क्षमता बढ़ जाती है तथा रोग उसके पास नहीं फटकते हैं।

स्वस्थ शरीर-अष्टविध ऐश्वर्य

जब शरीर पूर्णरुप से स्वस्थ हो जाता है, उसके सभी प्रकार के विकार नष्ट हो जाता है, तो वह व्यक्ति योगी बन सकता है, और उसे अष्टविध ऐश्वर्य अपने आप प्राप्त हो जाता है, अष्टविध ऐश्वर्य है-

1. आवेश- यूक्ष्म शरीर द्वारा दूसरे शरीर में प्रवेश करना ।
2. छन्दतः क्रिया- प्राणी-पदार्थो को वश में कर लेना,
3. चेतन ज्ञान- दूसरो के विचारो को जान लेना,
4. इष्टतः दृष्टि- इच्छानुसार देखना,
5. इष्टतः श्रौत- इच्छानुसार सुनना,
6. इष्टतः स्मृति- इच्छानुसार स्मरण करना, जन्मान्तरों का स्मरण करना,
7. इष्टतः कान्ति- इच्छानुसार स्वरुप धारण कर लेना,
8. इष्टतः अदर्शन- इच्छानुसार अदृश्य होना ।

ये सब क्रियाए असंभव नहीं है, इनके लिए तो शरीर का निर्माण श्रेष्ठ रुप से करना आवश्यक है, शरीर की शुद्धि आवश्यक है, बुद्धि की शुद्धि आवश्यक है।

इस धन्वन्तरी जयन्ती पर कुछ विशेष साधना प्रक्रिया प्रारम्भ कर कायाकल्प किया जा सकता है, पाठक निश्चय ही श्रेष्ठता की ओर बढ सकते हैं, काया कल्प प्रक्रिया सम्पन्न कर सकते हैं।

धन्वन्तरी यंत्र प्रयोग

1. इस साधना में आवश्यक सामग्री 'धन्वन्तरी यंत्र' तथा 'धन्वन्तरी माला' है।
2. यह साधना 13-11-2020 को संपन्न की जा सकती है या फिर शुक्ल पक्ष की एकादशी को यह साधना संपन्न करें।
3. यह साधना तीन दिनों की है तथा 13-11-2020 से इसे आरंभ करें।
4. यह साधना संपन्न करने वाला साधक तीनों दिन एक समय अन्न ग्रहण करें तथा फलाहार लें। साधक यदि साधना संपन्न करने के लिये एक बार आसन पर बैठे, तो फिर मंत्र जप पूर्ण करके ही आसन से उठे। साधना करते समय मन एकाग्रचित्त ही रखें। साधक यथा संभव कम बोले।
5. साधक जिस स्थान पर साधना करें, उस स्थान को साफ, स्वच्छ करें तथा स्वयं भी स्नान कर पीले वस्त्र धारण करें। साधक स्वयं के लिये भी पीले रंग का ऊनी आसन लें।
6. पीले रंग का वस्त्र बिछाकर उस पर धन्वन्तरी यंत्र को स्थापित करें, यंत्र का पूजन पंचोपचार विधि से करें।
7. घी का दीपक एवं अगरबत्तीयाँ जलायें। धन्वन्तरी का ध्यान करते हुए पुष्प यंत्र पर अर्पित करें-

सत्यं च येन निरतं रोगं विधूतं,
अन्वेषितं च सविधिं आरोग्यमस्य।
गूढं निगूढं औषध्यरूपम्,
धन्वन्तरीं च सततं प्रणमामि नित्यं।।

8. धन्वन्तरी माला से मंत्र की नित्य 7 माला मंत्र जप करें-

।। ॐ रं रूद्र रोगनाशाय धन्वन्तरैं फट्।।

9. जिस दिन साधना समाप्त हो रही हो, उस दिन ही मिट्टी के पात्र में यंत्र तथा माला रखकर उसमें दो मुट्ठी चावल रखे और उसे जल में विसर्जित कर दें या पीपल के नीचे छोड़ दें।

साधना सामग्री न्यौछावर- 1151/-

पंच कूटात्मक इन्द्रजिद् प्रयोग

धन्वन्तरी ऋषि ने अपने विशेष आयुर्वेद, रसायन साधनात्मक शक्ति से इसके निर्माण की विशेष प्रक्रिया को अपने ग्रन्थ में स्पष्ट किया है, बालक सामान्य तौर पर प्रकृति का दबाव झेल नहीं सकता, उन्हें बीमारी, पीड़ा की बाधा का प्रभाव

अधिक पड़ता है, इसके अतिरिक्त कई बालकों की बुद्धि का भी विकास तीव्रता से नहीं हो पाता, शारीरिक दृष्टि से निर्बल रहते हैं, अथवा अपनी शिक्षा की दृष्टि से स्मरण शक्ति की दृष्टि से कमजोर रहते है, इसके लिए यह 'पंच कूटात्मक इन्द्रजिद्' वरदान के समान है।

इसकी रसायनिक प्रक्रिया अत्यन्त कठिन है, ताबीज के आकार के इस यंत्र निर्माण की प्रक्रिया में विजया तलवार की धातु का प्रयोग कर उसे कल्पहार के पुष्प के दूध के साथ कोरंठ के फूलो का रस मिलाकर धीमी आंच में पका कर पारद संस्कार कर मन्त्र अनुष्ठान करना होता है, और फिर इसे इस ताबीज में भरकर प्रयोग किया जाता है। जो भी बालक इसे धारण करता है, उसके रोग भाग जाते हैं, और शरीर में स्वस्थता, कान्ति आने लगती है, वास्तव में धन्वन्तरी का यह वरदान बालकों के लिए जीवनदायी है, यदि कोई बालक शिक्षा की दृष्टि से कमजोर है, भूत-पिशाच का भय है, भय से रात्रि में बिस्तर गीला कर देता है, अथवा अन्य किसी भी प्रकार की भी बाधा हो तो यह 'पंच कूटात्मक इन्द्रजिद्' धारण करना चाहिए, विशेष बात यह है कि इसमें बालक को कोई मन्त्र जप अनुष्ठान नहीं करना पड़ता, क्योंकि यह इन्द्रजिद् अपने आपमें पूर्ण प्रक्रिया से तांत्रिक एवं मात्रिक प्रयोग से सिद्ध होता है।

विष्णु तेजस सिद्ध कंकण प्रयोग

जैसा खानपान चल रहा है, और जिस प्रकार की विचारधारा का प्रवाह है, उस कारण सामान्य तौर पर युवकों के चेहरो पर एक मुर्दनी-सी छाई रहती है, न तो चेहरे पर तेज दिखता है, और न ही आत्मविश्वास और कुछ नया करने की इच्छा ही रहती है, एक लीक पकड़ कर चल रहे है, तो चलते ही जाते हैं, क्या यह उचित है? युवावस्था को मैं बीस वर्ष से 45 वर्ष की उम्र तक गिनता हूं, इस समय तो उसमें जूझने की असीम क्षमता होनी ही चाहिए, कि वह पूरे आत्मविश्वास के साथ कार्य कर अपनी राह बनायें, अपने जीवन को अपनी इच्छानुसार मोड़ सके, ऐसा सम्भव है, इसमें कोई नई बात नहीं हैं, भगवान धन्वन्तरी ने अपने ग्रन्थ में लिखा है कि कलियुग में युवा भी वृद्ध के समान शारीरिक तथा मानसिक दृष्टि से आचरण करेगें।

'विष्णु तेजस सिद्ध कंकण' इन सभी बाधाओं को दूर करने का विशेष उपाय है, अष्टधातु से बना यह कड़ा यदि कोई धारण कर लेता है, तो उसे जीवन में कोई भी कार्य असम्भव अथवा कठिन नहीं मालूम पड़ता, जिस काम में भी हाथ डालता हैं उसमें सफलता प्राप्त करता है, चेहरे पर एक तेज सा आ जाता है और उसमें आकर्षण शक्ति पूर्ण रुपसे समाहित हो जाती है, 'विष्णु तेजस कंकण' धारण किये हुए व्यक्ति के शरीर में एक ऊर्जा निरन्तर प्रवाहित होती रहती है, जिससे उसका शरीर रोग रहित सुन्दर आकर्षक बन जाता है, तथा उसके कार्य सफल होते हैं।

इसके निर्माण की प्रक्रिया विचित्र है, अष्टधातु को, बन्धूक वृक्ष की जड़ को, लाल कनेर के फूलो के रस के साथ पका कर उसमें अपराजिता द्रव्य डाले फिर नौ पात्रों मे अलग-अलग रसायन के साथ इसे पका कर सुखाना पडता है, जब यह धातु कठोर हो जाती है, तब इससे कंकण का निर्माण किया जाता है, य नौ पात्र है-गुरु पात्र, देवपात्र, श्रीपात्र, योगिनीपात्र, भोगपात्र, वीरपात्र, आत्मपात्र, कल्याणपात्र, और बलीपात्र,। जो इस तेजस कंकण का निर्माण कर धारण कर ले तो उसे अपने प्राणों से भी अधिक प्रिय मान कर अपने पास रखना चाहिए, अपने प्रिय से प्रिय को इसे न दे, क्योंकि इसी के द्वारा साधक के जीवन में स्वस्थता, सुन्दरता, सिद्धि और सफलता की प्रक्रिया बन सकती है।

मायादिकाम् मुद्रिका प्रयोग

स्त्रियों का प्रधान गुण सुन्दरता और आकर्षण ही है, यदि ये दोनो गुण उसमें नहीं है, तो उसके जीवन में निराशा ही रहती है, स्त्री के शरीर की सुन्दरता के सम्बन्ध में हजारों ग्रन्थ लिखे गये है, एक-एक अंग की विशेष व्याख्या की गई है, धन्वन्तरी ऋषि के अनुसार स्त्रियों के चेहरे और शरीर दोनों में पूर्ण आकर्षण होना चाहिए, शरीर स्वस्थ रहना चाहिए, जिससे कि वह अपने आकर्षण के बल पर अपनी शक्ति तथा लक्ष्मी दोनों का उसमें वास हो सके। जो स्त्री 'मायादिकाम् मुद्रिका' धारण करती है, उसके शरीर की रचना 'जैसे मूर्तिकार काष्ठ को तराश कर मूर्ति की रचना करता है' शरीर से दोष इस प्रकार चले जाते है, जैसे अग्नि के प्रभाव से जल वाष्प बन कर उड़ जाता है।

इसके निर्माण में रांगा, शीशा, जस्ता, रजत तथा ताम्र को एक विशेष खरल में पीस कर चूर्ण रुप में बना कर इसमें राई पुष्प, चन्दन, प्रियगुं, नागकेसर, मैनसिल, तगर के मिश्रण के साथ नीम की समिधाओं से प्रदत्त अग्नि के साथ पका कर शुद्ध किया जाता है, फिर इसका पारद संस्कार सम्पन्न एक ढेले के रुप में धातु बनाकर उस धातु से मुद्रिका का निर्माण किया जाता है। यह मुद्रिका कठोर एवं रत्न रहित रुप में ही धारण करनी चाहिए, जो स्त्री शुक्रवार के दिन स्नान कर श्रेष्ठ आभूषणों सहित वस्त्रों से सुसज्जित होकर अपने पूजा कक्ष में कामेश्वर का ध्यान सम्पन्न कर इस मुद्रिका को धारण करती है, तो उसके शरीर से दोष लुप्त हो जाते है, रंग परिवर्तित होने लगता है, और एक विशेष आकर्षण छा जाता है, स्त्रियों के लिए तो यह वरदान स्वरुप ही है।

साधना सामग्री न्यौछावर- 2100/-

ऊपर लिखे सारे प्रयोग में रसायन प्रक्रिया का विशेष महत्व है, इसमें यदि थोड़ी सी भूल रह जाय तो उसका पूर्ण प्रभाव ही नष्ट हो जाता है, अतः इनका निर्माण रसायन शास्त्र के ज्ञाता के निर्देशन में ही करना चाहिए, अन्यथा लाभ के स्थान पर हानि हो सकती है। धन्वन्तरी सिद्धि दिवस वर्ष में एक बार आता है, और उनके द्वारा प्रदत्त ज्ञान पर आधारित इन वरदायक चैतन्य वस्तुओं को धारण कर कायाकल्प संभव है, इसमें कोई दो राय नहीं हो सकती। ♦♦♦

पारद दक्षिणावर्ती शंख

रसराज रससिद्ध पारद सभी धातुओं में सर्वश्रेष्ठ माना गया है। भगवान शंकर के शक्ति रूप होने के कारण सभी देवी-देवताओं के द्वारा वंदनीय एवं स्पृहनीय है। पारद धातु अपने आप में पूर्णता का प्रतीक है। भारतीय संस्कृति और धर्म में शंख का बड़ा महत्त्व है। विष्णु के चार आयुधों में शंख को भी एक स्थान मिला है। मन्दिरों में आरती के समय शंखध्वनि का विधान है तथा प्रत्येक तान्त्रिक पूजा में शंख के द्वारा अभिषेक का महात्म्य है। शंख के दर्शन मात्र से सभी पाप ऐसे नष्ट हो जाते है। यह दक्षिणावर्त शंख जिसके घर में रहता है वहाँ मंगल ही मंगल होते हैं, लक्ष्मी स्वयं स्थिर निवास करती हैं। पारद शंख की स्थापना से निश्चय ही धनागम में वृद्धि होती है तथा सम्पूर्ण जीवन में कभी धनाभाव नहीं होता।

जब श्रीकृष्ण ने द्वारिका नगरी बसाई तो पहले उन्होंने वास्तुशास्त्र के आधार पर यह सुनिश्चित किया कि नगरी का आकार शंख की भांति हो और नगर में समृद्धि तथा सम्पन्नता हो, इसलिए उन्होंने स्वयं पारद शंख-साधना सम्पन्न की, तभी द्वारिका नगरी अपने समय में सबसे धनी नगरों में सर्वोच्चता पर थी। धन, धान्य, अन्न, आभूषणों, रत्नों, भव्य प्रसादों से पूर्ण यह नगरी इन्द्रलोक के आकर्षण की भी धूमिल कर देती थी। ऐसी ही समृद्धि प्रदान करता है, यह 'पारद शंख', जिसका पूर्ण लाभ किसी भी बुधवार अथवा पुष्य नक्षत्र पर प्राप्त किया जा सकता है।

पारद दक्षिणावर्ती शंख न्यौछावर 2100/-

सम्पर्क करें:- विश्व तंत्र ज्योतिष

प्लॉट नं.-1, महावीर नगर, गौरव पथ, पॉलिटेक्निक कॉलेज मैन गेट के पास, जोधपुर-342001(राज.)
0291-2621625, 2615625, 2618625, 2440111, 2440999 टेलीफैक्स : 0291-2618625
Email : tantravtj@yahoo.co.in Visit us : www.kamalshrimali.com